वाणी संयम

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

वाणी का अर्थ होता है– भाषा, बोली। वाणी के माध्यम से वार्तालाप किया जाता है। भावों का आदान–प्रदान है वाणी। गूंगा व्यक्ति वाणी से बोल नहीं पाता। वह सब कुछ समझता है, देखता है और अनुभव करता है। भारतीय संस्कृति में संयम को जीवन का आधार माना गया है। जो व्यक्ति संयम, नियम, आचार, विचार से जीवनयापन करता है वह दीर्घजीवी होता है। इसीलिए कहा गया है– संयमः खलु जीवनम् अर्थात् संयम ही जीवन है।

वाणी का संयम, दृष्टि का संयम, मन का संयम, शरीर का संयम और जीह्वा का संयम करने से मानव इन्द्रिय निग्रह कर सकता है। वाणी संयम मनुष्य के लिए बहुत आवश्यक होता है। वाणी द्वारा मानव अपनी अनुभूति और भावनाओं को व्यक्त करके दूसरों को अपनी और आकर्षित कर सकता है। यह ईश्वर की मनुष्य को बहुत बड़ी देन है। आजकल लोग इस अमूल्य निधि का दुरुपयोग कर संसार में अनेक प्रकार के कष्ट दुःख, अपमान, निन्दा आदि सहन कर रहे है और अपने जीवन को भी गर्हित और पतीत बनाते जा रहे है। इस विषय पर गंभीरता पूर्वक सोचना है कि हम अपनी वाणी के दुरुपयोग को रोककर उसे किस तरह सुंस्कृत, सुमंगलकारी, सर्वकल्याणकारी बना सके।

शास्त्रों में शब्द को ब्रह्म कहा गया है। हम जब किसी शब्द का उच्चारण करते है तो उसका प्रभाव न केवल हमारे मन पर अपितु सारे संसार पर पड़ता है। क्योंकि शब्द का कभी लोप नहीं होता। प्रत्येक शब्द वायुमण्डल में गूंजता रहता है। यह अनुभवसिद्ध बात है कि जिसके प्रति हम शब्दों द्वारा अच्छी भावना प्रकट करते है वह व्यक्ति हमारा प्रेमी और शुभचिंतक बन जाता है। इसके विपरीत जिसके प्रति नकारात्मक विचार रखते है तो वह व्यक्ति अहित चिंतक और शत्रु बन जाता है। वाणी संयम का महत्व प्रत्येक धर्म में वर्णित है।

जैन धर्म में पांच समितियों के अन्तर्गत भाषा समिति नाम से वाणी संयम का उल्लेख है। जैन शास्त्रों में भाषा समिति का विशिष्ट वर्णन है। भाषा विषयक संयम को भाषा समिति कहते हैं।

क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, वाचालता, और विकथा इन आठ दोषों से रहित तथा आवश्यकता होने पर भाषण में प्रवृत्त होना भाषा समिति है। **''हितमितासंदिग्धाभिधानं भाषा समितिः''** हित, मित और असंदिग्ध वचन बोलने को भाषा समिति कहा है। मानव जीवन में भाषा विषयक संयम पर अधिक बल दिया गया है। अर्थात् किसी को मेरे वचन से पीड़ा न पहुंचे, इस उद्देश्य से पैशुन्य, हास्य, कर्कश, पर–निन्दा, आत्मप्रशंसा तथा रागद्वेषवर्धक विकथाओं आदि का त्याग करके स्व पर हितकारी वचन बोलना भाषा समिति है।

सत्य, असत्य, सत्यसहित असत्य और असत्य मृषा–ये वचन के चार प्रकार हैं। सज्जनपुरुषों के हितकारी वचन को सत्य कहते हैं। जो वचन न सत्य होता है और न असत्य उसे असत्य मृषा कहते हैं। इस प्रकार सत्य और असत्य मृषा वचन को बोलना तथा असत्य, कठोरता तथा चुगली आदि दोषों से रहित और अनवद्य अर्थात् जिससे पाप का आस्रव न हो ऐसा वचन बोलने वाले साधु के शुद्ध भाषा समिति होती है। जनपद सत्य, सम्मति सत्य, स्थापना सत्य, नामसत्य, रूप सत्य, सम्भावना सत्य, व्यवहार सत्य, भाव सत्य और उपमा सत्य–सत्यवचन के ये भेद हैं।

सत्य के विपरीत वचन असत्य है। जो वचन सत्य असत्य और सत्य असत्य से विपरीत होता है उसे आगमों में असत्यमृषा कहा है। वह वचन न तो एकान्त से सत्य होता है और न एकान्त से असत्य होता है और न सत्यासत्य होता है। संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ में प्रवृत्त हुए मन के व्यापार को रोकना मनोगुप्ति है। किसी को मारने की इच्छा करना संरम्भ है। मारने के साधनों पर विचार करना समारम्भ है और मारने की क्रिया को प्रारम्भ करने का विचार करना आरम्भ है। इन तीनों को रोकना आवश्यक है। सत्या, मृषा, सत्यामृषा और असत्यामृषा मनोगुप्ति के चार भेद हैं।

मन में सत् पदार्थ के चिन्तनरूप मनोयोग सम्बन्धी गुप्ति को सत्य मनोगुप्ति कहते हैं– जैसे– जगत् में जीव तत्त्व हैं, यों सत्य पदार्थ का चिन्तन। असत् पदार्थ के चिन्तनरूप मनोयोग सम्बन्धी गुप्ति को असत्य मनोगुप्ति कहते हैं। जैसे– जगत् में जीवतत्त्व नहीं है। सत् और असत् दोनों के चिन्तनरूप मनोयोग सम्बन्धी गुप्ति को सत्यामृषा मनोगुप्ति है– जैसे– आम्र आदि विविध वृक्षों का वन देखकर, यह आम्र का वन है, ऐसा चिन्तन करना। जो चिन्तन सत्य

भी न हो, असत्य भी न हो। जैसे– देवदत्त! घड़ा ले आए, इत्यादि आदेश निर्देशात्मक वचन का मन में चिन्तन करना। जो भाषा सत्या है, जो भाषा मृषा है, जो भाषा सत्यामृषा है, अथवा जो भाषा असत्यामृषा है, इन चारों भाषाओं का का प्रयोग नहीं करना चाहिए। वचनगुप्ति के चार प्रकार हैं– सत्या, मृषा, सत्यामृषा, असत्यामृषा। यतनावान् मुनि संरम्भ, समारम्भ, और आरम्भ में प्रवर्त्तमान वचन का निरोध करे। वाणी संयम पर कबीरदासजी ने लिखा है– ऐसी वाणी बोलिये मन का आपा खोय औरन को शीतल करें आपहुं शीतल होय। अर्थात् मनुष्य को ऐसी वाणी बोलना चाहिए जिससे अहंकार न प्रकट हो, दूसरों को श्रुत मधुर होने के साथ स्वयं को भी अच्छी लगे।